Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2023 GISRRJ | Volume 6 | Issue 2 | ISSN : 2582-0095

स्वातंत्र्योत्तर मैथिली उपन्यासमे प्रकृति चित्रण

डॉ. विनीत कुमार लाल दास
स्नात्कोत्तर (मैथिली), स्वर्णपदक प्राप्त, नेट, पटना विश्वविद्यालय, पटना

Article Info
Volume 6, Issue 1
Page Number : 01-08
Publication Issue :
March-April-2023
Article History
Accepted : 10 Feb 2023
Published : 05 March 2023

लिखावटक वाह्य–स्वरूपक आधारपर लेखनक तीन प्रकार मानल गेल अछि – गद्य, पद्य आ दुनूक मिश्रित रूप चम्पू। गद्य साहित्यक एक भेद उपन्यासकेँ कहल जाइत अछि। तेँ उपन्यासकेँ बुझबाक लेल सबसँ पहिले गद्य साहित्यकेँ बुझब आवश्यक अछि।

मैथिली भाषा–भाषीक लेल ई गौरवक विषय अछि जे आधुनिक भारतीय भाषामे उपलब्ध सभसँ प्राचीन गद्य–ग्रंथ मैथिली भाषाक 'वर्णरत्नाकर' अछि। तेँ मैथिली भाषामे गद्यक विकास बहुत पहिलेसँ भेल अछि। ज्योतिरीश्वरक बाद गद्य मैथिली भाषामे लिखब लगभग बन्दे जकाँ रहल कारण ज्योतिरीश्वरक बाद विद्यापति अपन रचना अवहट्ठ आ संस्कृतमे गद्य रचना कयलाह तथा मैथिली भाषामे पद्यक रचना कयलाह मुदा गद्यक रचना मैथिली भाषामे नहि कयलाह।

मध्य–कालमे नाटकक युग छल मुदा ओहि कालमे सेहो मैथिली गीतेक बोलबाला रहल छल। ओहि कालक नाटकक मध्य मैथिली भाषाक प्रयोग कयल जाइत रहल जाहि मध्य मैथिली भाषाक प्रयोग देखबाक लेल भेटैत अछि। ओहि कालमे नेपाल आ आसाममे मैथिली नाटकक चलन जोर–शोरसँ छल मुदा ओहि कालमे कथा–साहित्यक उद्‌भव नहि भेल छल।

मैथिली साहित्यमे कथाक उद्‌भव संस्कृत भाषाक विद्यापतिक 'पुरूष परीक्षा' नामक नीति–विषयक कथाक पोथीक मैथिली अनुवादसँ भेल अछि आ जखन चंदा झा 'पुरूष परीक्षा'क मैथिलीमे अनुवाद कयलाह तखन ओहि समयक बुद्धिजीवि लोकनि हुनका देखा–देखी ओहो लोकनि संस्कृत भाषाक कथाक आन–आन पोथी सभक मैथिली भाषामे अनुवाद करय लागल छलाह जाहिसँ मैथिली कथा साहित्य समृद्ध होबऽ लागल छल मुदा ओहि समय 1888–89 धरि उपन्यासक नामोनिशान नहि छल।

उपन्यासक उद्‌भव 1900 ई.क बादेसँ भेल अछि आ उपन्यासक प्रारंभिक समयमे कथा आ उपन्यासमे कोनो विशेष भेद नहि होइत छल। जकरा उपन्यास कहि संबोधित करल जाइत छल, वास्तवमे ओ कथे रहैत छल। जेना–जेना समय बितैत गेलैक तेना–तेना वस्तु–स्थितिमे परिवर्तन होइत गेलैक आ उपन्यास लेखनमे उत्तरोत्तर सुधार होइत गेल। आगू चलि क मैथिली आलोचना साहित्यक विद्वान लोकनि द्वारा उपन्यासक आलोचना करलापर ओहिमे सुधार करैत रहलाह जकर परिणाम आइ हमरा लोकनिक सोझा अछि। आइ मैथिली उपन्यास पूर्ण गतिसँ अपन विकासक पथपर अग्रसर अछि।

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

डॉ. दिनेश कुमार झा अपन पोथी 'मैथिली साहित्यक आलोचनात्मक इतिहास'मे उपन्यासक तत्त्वक संबंधमे लिखने छथि– "कलाक दृष्टिसँ उपन्यासक छओ टा तत्त्व मानल गेल अछि– कथानक, पात्र, संवाद, वातावरण, उद्देश्य एवं भाषा–शैली। कोनो श्रेष्ठ उपन्यासमे एहि छवो तत्त्वक समुचित संतुलन अनिवार्य मानल गेल अछि।"[1]

उपन्यासक छओ तत्त्वमे एक तत्त्व वातावरण होइत अछि जाहिमे प्रकृति–चित्रण देखबामे आबैत अछि। प्रकृति–चित्रणमे खेत–खरिहान, बाध–बोन, नदी–नाला, पर्वत–सागर, प्रात–मध्यान्ह–साँझ, दिन–राति, सूर्य–चन्द्र, ऋतु आदिक चित्रण करल जाइत अछि। एहि दृष्टिसँ स्वातंत्र्योत्तर मैथिली उपन्यासकेँ देखैत छी त बुझना जाइत अछि जे मैथिलीक अनेको एहन उपन्यास अछि जाहिमे प्रकृति–चित्रण देखबामे आबैत अछि।

योगानंद झाक 'भलमानुस' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

"पोखरौनीक बीच गाममे एक पोखरि अछि। ओत' मोगियाही घाटपर भोरसँ दुपहर तक किछु ने किछु लोक रहिते अछि। सूर्योदयक पूर्वेसँ गामक पुतोहु लोकनि चुपचाप डूब द' जाइत छथि। आ रौद–बसात भेलापर दस–एगारह बजे धरि गामक बेटी तथा वृद्धा लोकनिक भीड़ रहैत अछि। एहिठाम ने घाटक ठेकान छैक ने दारुक। कौखन दाइ–माइ लोकनि एकटा पतरका तखताक दारुकेँ एम्हर घुसकाक' जाइत छथि तँ कोखन ओम्हर। आ घाट अछि सहरजमीनसं चारि–हाथ नीचाँ। सेहो उभड़–खाभड़। जखन सहरजमीनपर गधकिच्चनि भ' जाइत छैक तखन चढ़ै–उतरैमे सेहो परम कष्ट।"[2]

एहि ठाम प्रकृति–चित्रण पोखरिक चित्रणक रुपमे बड़ मनोरम दृश्य उपस्थित करल गेल अछि।

डॉ. लेखनाथ मिश्रक 'रंजना' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

"चैतक भोर। अमैया बसात। लोक कैं निन्नक लेल आँखि खुजिते नहि रहैत छैक। पहर रातिए सँ कोइली जोर–जोर सँ कू कुक कूजन करए लगैत अछि। मुदा जेना सोलह वसन्तक पोसलि, दूधक धार सँ धोइलि गौरांगिनी अलसनयनाक नयन बिनु मद पिउने मातल झपलाइत रहैत छैक तहिना भोर मे प्राणीक आँखि खुजैत छैक आ' फेर सहजे मुना जाइत छैक। कतेक काजार्थी लोकनि नियारने रहैत छथि जे पहो नहि फाटल रहतैक कि तखने उठि कैं काज कए आएब, किन्तु पह फटैत उठबाक कोन चर्चा जे जँ केओ डेनो धऽ कऽ उठबए जाइत छन्हि तँ कहैत छथिन्ह आहाँ कैं हमरा सँ कोन शत्रुता अछि, हम नेहोरा करैत छी कनेक काल आओर सुतए दीअऽ। शीतल मन्द बसात मे दाकीक ढाकी निन्न आँखि पर अबैत छन्हि आ' नेना जकाँ ठोकि कऽ सुता दैत छन्हि।"[3]

एहि ठाम प्रकृति–चित्रण प्रात कालक चित्रणक संग ऋतुक चित्रण आ ओहि समय कोइलीक कुकक चित्रणक रुपमे करल गेल अछि।

पद्मश्री डॉ. उषाकिरण खानक 'पोखरि रजोखरि' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

"हेमजावाली खरहोरि सँ घूरि क' अएलनि तँ कोनटाक इनार पर हाथ पएर धोअ' लेल ठाढ़ भ' गेलीह। मुन्द्रिका डोल मे राखल जल सँ हाथ पएर धो सिमटी बला चबूतरापर चढ़ि गेलि। धम्म द' क' रस्सी सहित डोल इनार मे खसा देलकै। डोलक संग पानिक हलचल, तकर झनझनाइत स्वर हेमजावालीक करेज पर सदिखन लागै छनि, आइयो लगलनि। ओ हाथ पएर आ मुह धो पूब मुहे ठाढ़ि भेलीह। घनगर लीचीक गाछ पर चिड़इ चुनमुनी

कचबच करैत छल, लुक्खी ऊपर नीचा भगै छल। हेमजावाली जखन श्यामा रहथि तखन लुक्खी जकाँ गाछ पर चढ़थि उतरथि; लोक हिनकर तुलना लुक्खी सँ करनि।"[4]

एहि ठाम खरहोरि, लीचीक घनगर गाछ आ ओहि पर लुक्खीक अवरजात सभ प्रकृति–चित्रणक हिस्सा अछि।

बिजेन्द्र कुमार मिश्रक 'कुचक्र' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

" दिल्लीक हाल जुनि पूछू। जाड़ मे शोणित जमि जायत आ गर्मी मे देह घमा जायत। अखुनका समय बड़ बढ़िया छै, ने ओतेक जाड़ ने ओतेक गरम। बेशी स' बेशी एक मास धरि एहेन दोरस मौसम रहतै, ओकर बाद त' पंखा–कूलर सभटा फेल! मात्र ए.सी. वला सभ के जान बचल रहैत छैक।"[5]

एहि ठाम दिल्लीक प्रकृति–चित्रण एकदम सटिक अछि।

प्रदीप बिहारीक 'शेष' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

"उगैत सुरुजकेँ दोसर अर्घ्य पड़लाक कनिये कानक बाद घाट उदास होमऽ लगलैक। व्रती सभ अर्घ्य–प्रसाद उसरगलनि आ छोट–छोट बच्चा सभक अंगा–पेन्टक जेबी सभमे ठकुआ–भुसबा सैंताय लागल। सभ अपन–अपन घाट परक ढ़ाकी, केराक घौड़, कोसिया, कुड़बार उठा आँगन दिस बिदा भेल।"[6]

एहि ठाम प्रात, उगैत सूर्य आदिक चित्रण प्रकृति–चित्रण अछि।

सुरेन्द्र नाथक 'उसरगल लोक' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

" जतय पहिने कुरथी, खेसाड़ी, गाम, कोदो आ मडुआ उपजैत छल ओतय धान गहूम होमय लागल। जतय धान आ गहूमक संग सब फसल उपजैत छल ओतय पानि बेशी लागला स' फसल खेते मे गल' लागल। एकहु आध–आछार पानि पड़ला पर ऊँच–नीचक सब फसल बाढ़ि मे दहाब' लागल। फैदा यैह भेल रहै जे आब बाढ़ि पहिने जकाँ नहि अबैत रहै मुदा जखन अबैत' पिछुलका सब रेकॉर्ड केँ तोड़ने आबै। जेना बहुत दिन स' जेल मे बंद कैदी के आजादी भेटलाक बाद घरक लेल सुरफुरी रहैत अछि तहिना बाधिन जकाँ गोंगियाबैत, घर–दुआर समेटैत आ लोक केँ पछाड़ैत अबैत छलै। लोकक जीह पर आब इहो चर्च होमय लागल रहै, "रौ, ई कोन आफत संग लगा देलकहु रौ। चौबे गेल छब्बे बन' आ दुवे बनि केँ आयल।"

एहि स' एक फैदा आओर भेल रहै। बाढ़ि जखन अबै, प्रखंडक नाट्यलीला देख' बला रहैत छलै। एहि नाट्यलीलाक सम्पूर्ण पात्र अपन–अपन गाना– बाजाक संग उतरि जाइत छलै। किछु स्थानीय आ किछु राजधानीक महान कलाकार सब के देखबाक मौका लगैत छलै। निरीक्षण भवन मे आसमान स' उतरल देवताक शोकाकुल आ नटकिया पोतल मुँह देखैत बनैत अछि। गाड़ीक पी–पी बढ़ि जाइत अछि। आकाश मे हेलीकॉप्टर मंडराब' लगैत अछि। जनताक करुण पुकार शुरू भ' जाइत अछि। बिना मांगने भोजन, वस्त्र आ रहबाक ठौर भेटि जाइत अछि। गुम्मो लोकक मुँह खुजि जाइत अछि। आ अंत में, सब केँ दर्शन दैत, आश्वासनक बेर–बेर हाथ डोलाबैत देवता अन्तर्ध्यान भ' जाइत अछि।

एक समय रहै। बेर–बेर बाढ़ि अयला स' उपज बढ़ैत छलै। बाढ़िक गादि आ पाँक स' खेतक उर्वराशक्ति बढ़त रहै। रासायनिक खादक काज नहि पड़ै। बाढ़ियो अयबाक समय आ सीमा बुझल–गमल रहै। एकहि बेर

बाँसक–बाँस भरि छकल पानि नहि दौड़ि जाइत रहै। लोको एतेक नहि मरैत रहै। जहिया स' बान्ह बनलैए तहिये स' सब आफत बढ़लैए। अनिश्चितताक अन्हार पसरि गेलैए। बुझले नहि रहै छै जे कखन बाढ़ि एतै। कतेक पानि रहितै। बाढ़ि आबहु वला रहैत छै त' प्रशासन बीच मे टपकि जाइत छै। अनेरोक भविष्यवाणी करैत डराबैत रहै छै। फेर आश्वासनो दैत छै जे घबड़यवाक बात नहि छै। प्रशासनक काज युद्ध स्तर पर चलि रहल छै।"[7]

एहि ठाम बाढ़िक विभिषिकाक चित्रण प्रकृति–चित्रणक उत्कृष्ट नमूना अछि।

मधुकान्त झाक 'स्वेदजीवी' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

"रातिक एक बाजि गेल। समीपक करखानाक साइरन चिकरि के शान्त भऽ गेल। मिथिल जी के निन्न नहि भऽ रहल छलनि। बैसखा रौदमे भरि दिन धीपल एहि सेडक टीनही छतसँ जेना एखनहुँ आगि बरसि रहल छल। ओछाइन पसेनासँ थालम–थाल भऽ गेल छनि। देह घामक धारमे जेना कतहु बहि हेरा गेल छनि। उमस भरल एहि कलकत्तिया गर्मीसँ बेचौन भऽ उठल छथि मिथिल जी।"[8]

एहि ठाम प्रकृति–चित्रणमे गर्मीक चित्रण करल गेल अछि।

मधुकान्त झाक 'ममता जोगी' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

"पछिला साल भादवक पश्चात ग्राममे वर्षा नहि भेल। हथिया नक्षत्र फेर दगाबाजी कयलक। अगहन मे धान कटबाक बदला लोक दरबज्जे–दरबज्जे फकसियारि कटैत फिरैत रहल। मरहन्ना पड़ल धान कटनिहार जन–मजूर नहि भेटैत छलैक। स्थिति एतेक खराप भऽ गेलैक जे लोक चर–चाँचर मे धानक सुखायल डाँट मे आगि लगा खेतकेँ उग्रास करबाक प्रयास शुरू कयलक। जकरा पछिला वर्खक किछु अन्न घरमे बाँचल छलैक से तँ कोनो ना दिन–कटैत छल। लेकिन सय मे नब्बे–लोकक घरमे दुनू साँझ चूल्हा जरब आस्ते–आस्तें बन्न हुअय लगलैक। जन मजूरकेँ लोक बोनि कतय सँ देत जे खेती करत ताहि चिन्ता मे किसान मरल जाइत छलाह। गाम सँ कुक्कूर बिलाड़ि पड़ाय लगलैक। पोखरि झाँखरिक पानि सूखा लगलैक। जल्दी–जल्दी लोक खस्सी–बकरी, गाय–बाछी बेचय लागल। माल–जालकेँ पानि आनि कतय सँ पियाओत से समस्या भऽ गेलैक।"[9]

एहि ठाम प्रकृतिक मारिसँ लोक कोनो बेहाल रहैत अछि, से एहि प्रकृति–चित्रणमे देखबामे आबैत अछि। जल जे जीवनक लेल अतिमहत्वपूर्ण वस्तु अछि, तकर अभावमे कोनो लोक आ माल–जालपर प्रभाव पड़ैत अछि, तकर चित्रण बड़ सजीव रूपेँ कयने छथि।

आशा मिश्रक 'उचाट' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

"फागुनमे यत्र–तत्र फूल सभ पर तितली उड़ैत–बैसैत रहैत छलै। भरि–भरि दिन छौंड़ा सभ संगे तितली पकड़ैत छल। चैतक मास अगिलग्गीक होइत छलै। बाबी चैतमासकेँ उतपतिया मास कहथि। आबि गेल चैत उतपतिया। धुक्कड़, बिहाड़ि आ अगिलग्गीक मास। आकाश लाल होइतहिं केओ चिचिया उठैत छल– फल्लां गाममे आगि लगलै। सब पुरूष बाल्टी–डोल उठा–उठाक' ओहि गाम दिस दौड़ैत छल। . . . . . आमक मास भरि–भरि दिन टिकुले बिछैत बीति जाइत छलै। रातिमे कनी जोरसँ हवा, बिहाड़ि उठल नहि कि बाबीक संग चारू भाइ–बहीन चंगेरी ल' क' कलम पहुँच जाथि।"[10]

एहि ठाम प्रकृति लोककेँ आनंद आ दुख दुनू दैत अछि। आशा मिश्र प्रकृति–चित्रण करबामे सिद्ध–हस्त बुझना जाइत छथि। खन आनंद आ खन दुखद स्थितिक चित्रण करब साधारण बात नहि होइत अछि।

साकेतानंदक 'सर्वस्वांत' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

"फेर बरखा। धारासार। कखन भोर भेल, कखन साँझ, पता लगायब मोसकिल। कखनहुँ बुनछेको होइत अछि तँ ओ झमटगर बरखाक भूमिका बनि जाइत अछि। ई बदरी कहिया सँ लधने अछि, लोक कैं मोन नहि छै। ओना ई कहब ठीक हैत जे अइ बेर रामवनमी सँ जे लधान लधलक से आब तँ दशमी लगिचियेलै। छै एखन दू मास, लेकिन अइ बेर की दशहरा हैत? ई बरखा छोड़त तखन ने दशमी कि दिवाली? झलबा झा कैं होइ छलनि जे आइ जरूर उबेर हेतै। उबेर हेतै आ ओ बाध दिस जेता। बाध जायब जरूरी छनि। खेत देखब जरूरी छनि। आर्दरा बीति रहल छै आ एक्को बेर बाध नहि जा सकला। ई पानि जे ने कराबय। घरो सँ निकलब पराभव। रोज अहल भोरिये उठैत छथि। राति तँ सहजहिं निन्दे ने भेलनि। अधरतिया मे आँखि लगबो कयलनि तँ तेहन ने ठनका आ पानिक संग बतास जे झटका सँ चादरि भीज' लगलनि, आ आँखि खूजि गेलनि। तैं पौ फटै सँ किछु पहिने, जैं कि कने फड़िच्छ भेले कि छाता ल' क' विदा भ' गेला। मंदिरक इनार पर मुँह धोइत ओ आकाश दिस तकलनि। कत्तहु नीलक दर्शन नहि, धूसर मेघ तराउपरी। मंदिरक बगल अपन खोपड़ी मे गनेसी चुक्कीमाली बैसल सभ दिन जकाँ पराती टेरने छल। पता नहि गनेसी बुढ़बाक एक बाकुट देह मे कत्ते दम छैक जे एत्ते जोरक टाहि मारैए–"हे भोला नाथ, कखन हरब दुख मोर।"

"गनेसी।"

'के पंडीजी ?" बुढ़बा कैं सूझे नै छै। मुदा आवाज आ पयरक आहटे सँ ओ भरि गाम कैं चीन्है छै।

"हँ, गनेसी। ई पानि छुटबो करतै हौ ?"

"ई पानि ?" अपन दंतहीन मुँह सँ ओ भभा क' हँसैत अछि।

"सूरदास अब बूड़त है बिरिज।" गनेसी फेर हँसैत अछि।

"हँसै छ' गनेसी ? एत्ते वयस भेल' देखने रहक कहियो एहन बरखा ?"

"पड़ल रहै, अहू सँ बेसी। अहाँ आउर के जलम सँ पहिने। तहिया हम आ करिया कड़गर जुआन रहियै।"

"कहियाक गप्प करै छ' बुढ़ा ?"

"भुइकंपक साल सँ पहिले। खंड–परलय होइत–होइत बचलै। ओइ साल कोसी अहू गाम कैं दोमि देलकै। अखड़ाहाक सड़क पर करिया एगारह सेरक रहु पकड़ने रहय। कमो सँ कम छओ मास धरि तँ बदरी लधनहि रहलै।"[11]

एहि उपन्यासमे उपन्यासकार प्रकृति–चित्रण वर्षा–कालक चित्रण करैत ई देखयबाक प्रयास कयने छथि जे मिथिलामे वर्षा–कालमे केहन स्थिति बनल आ बनाओल जाइत छैक? एक त अनवरत वर्षा आ उपरसँ बाढ़िक प्रकोप! एहन स्थितिमे लोक ओकरा झेलैत अछि। ई कम बड़का बात नहि छै।

गौरीनाथक 'दाग' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

"कोइली कुहुकि रहल छै–कू–कू कूऽऽऽ...!

एक टा आमक झमटगर गाछ केर कतेको डारि मे कतेको झूला लागल छै। सब झूला पर मारते छौंड़ा–छौंड़ी पेंग मारैत झुलि रहल है। एक टा झूला पर सुभद्रा सेहो झुलि रहल यए।

किछु छोट–छोट बच्चा सब एक टा खोपड़ी मे कनियाँ–वर बनि बियाहक खेल खेला रहल गए। झूला पर सँ उतरि सुभद्रा वर–कनियाँ बनल बच्चाक गाल धपधपाबै यए। फेर घुरिक' अपन झुला पर चढ़ि खूब जोर–जोर सँ झुल' लगै यए। आकाश–पाताल बीच पेंग मारैत झुला झुल' मे बेसुध भ' जाइ यए ओ।

अचानक कारी–कारी मेघ उमड़ि–घुमड़ि अबै छै। हवाक तेज झोंका, धूरा–गर्दा उड़ब' लगै छै। टिपिर–टिपिर पानि पड़' लगै छै।"[12]

एहि ठाम उपन्यासकार ग्रीष्म ऋतुक वर्णन बड़ सजीव रूपे कयने छथि।

डॉ. विद्यानाथ झा 'विदित'क 'मानव–कल्प' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

"सहरगंज। कोशिकन्हाक एकटा पैघ झमटगर गांव। तीस हजारक लगान आबादी। एके गाममे दू–दूटा पंचायत। दूटा प्राथमिक विद्यालय एकटा मिडिल स्कूल। एकटा बिना मंजूरीक मोसफरकाती हाइ स्कूल आ बिना डाक्टरक एकटा प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र आ दूटा राशनक दोकान। समय–समय पर स्कूल आ अस्पतालमे प्रजातंत्रक गहबर बनैत चारिटा बूथ।

एक समय छल जहिया एहि गामक लोक धानक बखारे कहैत रहथि। असगरे ऐ गामक चारू चओरमे ततेक ने धान उपजैत छल जे ओहि से एकटा जिलाक के कहय जे आधा प्रदेशो यदि भरि वर्ख एकरे चाउर खाइत रहितय, तँ तैयो ई अन्नपूर्णाक भंडार नहि घटैत। परन्तु ई तँ कोशीक अबाहि सँ पूर्वक गप्प थिक। आई तँ एहू ग्राममे गरीबी रेखासँ नीचा रहयबला परिवारक संख्या पांच हजारसँ कम नहि अछि।

काल बड्ड निष्ठुर, निर्मम आ क्रूर होइत अछि। परिवर्तनक अपन एहि विलक्षण सामर्थ्यसँ ई संसारक प्रत्येक वस्तुक आकार–प्रकार बदलैत रहैत अछि। चाहे ओ गांव हो अथवा लोक। कालक क्रीड़ामे कोनो वस्तुक अपवाद नहि अछि। वास्तवमे एहि "परिवर्तिनि संसारे"सँ कालक उपस्थिति आ आकृतिक पता सेहो चलैत अछि आ एहीसँ ओकर महत्वो सिद्ध होइत अछि।

कालक एहि परिवर्तन–शक्तिक जीवन्त उदाहरण थीक सहरगंज। पहिने जो समतोला जकाँ गोल आ सोहनगर आकृतिमे एकेठाम बसल छल, घरपर घर छल, एकदम सटल आ गसल। से कोशीक कटानक कारण बुझ छहोछित्त भऽ गेल। काल आ कोशी दुनू जेना सिखाबुद्धी कऽ ओहि समतोलाक छिलका उतारि ओकर सबटा फांककेँ अलग–विलग कऽ देलक।

वर्त्तमान सृष्टिक सम्बन्धमे ई मान्यता प्रचलित अछि जे ई पृथ्वी पहिने पानिमे डूबल छल तकरा वराह भगवान अपन थुथुनसँ उठाकऽ ऊपर अनलनि आ तकरा पुनः अपन सामर्थ्यसँ पानिएपर स्थिर कैलनि। तकरो उदाहरण थीक सहरगंज। पृथ्वीक सृष्टि एकबेर भेल आ से तहियेसँ चलि रहल अछि परन्तु ई गाम तँ कोशीक

अवाहिमे प्रतिवर्ख साओन–भादवमे जल–समाधि लऽ लैत छल आ दुर्गापूजाक ढोल सुनियेकऽ फेर नहु–नहु पानि सँ ऊपर अबैत छल। फेर वैह रामा वैह खटोलबा। अगहन अबैत–अबैत फेर वैह गांव यथापूर्वमकल्पयत् कँ सार्थक करैत बसि जाइत छल। सहरगंजक निवासी प्रतिवर्ख होमयबला एहि अठमस्सू सृष्टिक साक्षिए नहि तकर अभ्यासी बनि गेल छलाह।"[13]

एहि उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण वर्त्तमानक नहि अपितु भूतकालक अछि। पहिले केहन प्रकृतिक दृश्य रहैत छलैक आ आब केहन भ गेल छैक, तकर नीक चित्रण देखबामे आबैत अछि।

रमानंद रेणुक 'उत्तर जनपद' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

"बाध मे खेत सभक माटि कहि रहल छलैक जे खेत बेस उपज वाला छलैक। सभ खेत मे खेसारी अथवा मसुरीक बेस घनगर डाँट छलैक। अधिकांश आड़ि–धूर जकाँ भरि ठेहुन, भरि जाँघक जाहि पर खूब झमटगर राहड़िक गाछक दू पँतियानी। दुनू पँतियानी अपन–अपन खेत दिस ओलरल। बेस फुलायल आकि पुष्ट छीमी सँ लदफद।

कोनो–कोनो आड़ि कम ऊँचक आ राहड़ि बिहीन। ओही आड़ि पर दऽ कऽ ओ सभ आगाँ बढ़त गेल। ई बुझबा मे ओकरा कनियो भाङठ नहि रहलैक जे खेत मे धानक फसिल बेस जबरदस्त होइत छलैक आ ओही मे छिट्टा दऽ कऽ खेसारी–मसूरी आकि बूटक खेती गृहस्थ करैत छल।

कत्तहु–कत्तहु एकाध कोलाक खेसारी उजाड़ल छलैक। भरिसक महींसक घासक निमित्तें उखाड़ि लेल गेल होयतैक।"[14]

एहि उपन्यासमे उपन्यासकार अपन वर्णन–कलाक परिचय दैत वर्त्तमान आ भूत दुनू कालक प्रकृतिक चित्रण क ई प्रमाणित क देने छथि जे अवसरक उपयोग कोना कयल जाइत अछि।

सुभाष चंद्र यादवक 'गुलो' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

" कंदाहावली कए नव रोजगार भेटलइ–ए। मलहदक चाँप मे मखानक कमौनी। नौ बजे सए तीन बजे धरि भरि ठेंगहुन पानि मे ढूकि कए मखान महक भाकन, करमी, डोका आ घोंघा बीछ कए बाहर करय पड़इ छै। एक सय टाका रोज भेटै छै। कंदाहावली भोरे भानस करइ–ए। कुइछ खाय कए कमौनी करय चलि जाइए। घूमि कए एला पर नहाइ–ए। सौंसे देह करू तेल लगबइ–ए। करू तेल नोचनी मारै छै। अदहा घंटा पएर मोड़इ–ए। फेर आरा चलि जाइए। खेत मे कतौ–कतौ तोड़ी के छिट्टा देल छै, से बीछइ– ए। चिकना पाँच–सात दिन मे उखाड़इ वला भाए जेतै।

रिनियाँ मनसुआयल–ए। आइ डोका के मौंस खायत। कंदाहावाली कहि कए गेल छै डोका लेने एतै। लेकिन डोका नै भेलै । ऊ घोंघा लेने एलै। घोंघा छोट होइ छै।"[15]

एहि ठाम उपन्यासकार मिथिलाक प्रकृतिक चित्रण कयने छथि।

जगदीश प्रसाद मंडलक 'पंगु' उपन्यासमे प्रकृति–चित्रण

"मिथिलांचल सभ दिन धार–धुरक इलाका रहबे कएल अछि। दर्जनो धार मिथिलांचलक बीच अछिए। ओहू धार–धूरमे सभ धारक गति–विधि एके रंग सेहो नहि अछि। किछु धार एहेन अछि जे बेसी काट–खोट करैए आ किछु एहेन अछि जे बहेत तँ अछि सालो भरि मुदा समटल गतिये। तैसंग मरल धार सेहो अछिए। मरल धारक माने भेल, ओहन धार जे बरसातमे तँ किछु दिन बोहितो अछि मुदा रहैए सभ दिन सुखले। जइसँ ने ओइ जमीनमे उपजा–बाड़ी होइए आ ने उपयोगक कोनो दोसरे काज। तैसंग माटिक रूपमे सेहो दुर्भाग्य रहल अछि जे उपजाउ माटि माने उर्वर शक्तिबला खेतक माटि भँसि गेल आ ओकरा ऊपर दोखरा बाउल भरि गेल।

कोसी–कमला नदीक उपद्रव सबहक सोझमे छेलैहे। ओकरो रोक–थामक लेल मिथिलाक किसान उठि कऽ ठाढ़ भेला। कोसी नदीकेँ दुनू भागसँ बान्हि ओइ पानिक उपयोग सिंचाइ–ले करैक योजना बनल।"[16]

अन्तमे निष्कर्षक रूपमे कहि सकैत छी जे बड़ कम्मे रचनाकार होयताह जे अपन औपन्यासिक रचनामे प्रकृति–चित्रण नहि कयने होयताह। सभ अवसरक ताकमे रहैत छथि। जिनका जेहन दृश्य देखबामे आबैत छनि ओ ओहन दृश्यक चित्रण अपन–अपन रचनामे कयने छथि।

संदर्भ सूची

1. मैथिली साहित्यक आलोचनात्मक इतिहास – डॉ. दिनेश कुमार झा (तेसर संस्करण 2007), मैथिली अकादमी, पटना; पृष्ठ संख्या – 130
2. भलमानुस – योगानंद झा, (दोसर खेप 1989), मैथिली अकादमी, पटना; पृष्ठ संख्या – 104
3. रंजना – डॉ. लेखनाथ मिश्र, (दोसर खेप 1989), ज्योति प्रकाशन, पौना, मधुबनी; पृष्ठ सं. – 26
4. पोखरि रजोखरि – उषाकिरण खान (2017), शेखर प्रकाशन, पटना; पृष्ठ सं.– 21
5. कुचक्र – बिजेन्द्र कुमार मिश्र (2004), चामुण्डा प्रकाशन, गंधवारि, मधुबनी; पृष्ठ सं. – 11
6. शेष – प्रदीप बिहारी (2012), चतुरंग प्रकाशन, बेगुसराय; पृष्ठ सं. – 07
7. उसरगल लोक – सुरेन्द्र नाथ (2017), नवारम्भ, पटना; पृष्ठ सं. – 22
8. स्वेदजीवी – मधुकान्त झा (2008), शेखर प्रकाशन, पटना; पृष्ठ सं.– 15
9. ममता जोगी– मधुकान्त झा (2012), मनोरमा प्रकाशन, पटना; पृष्ठ सं. – 111
10. उचाट – आशा मिश्र (2010), तूलिका प्रकाशन, दरभंगा; पृष्ठ सं. – 78
11. सर्वस्वांत – साकेतानंद (2003), राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., पटना; पृष्ठ सं. – 7
12. दाग – गौरीनाथ (2012), अंतिका प्रकाशन, गाजियागाद, उत्तर प्रदेश, पृष्ठ सं. – 109
13. मानव–कल्प – डॉ. विद्यानाथ झा 'विदित' (2008), प्रस्तुति प्रकाशन, दुमका, झारखंण्ड; पृष्ठ सं. – 21
14. उत्तर जनपद – रमानंद रेणु (2003), कर्णगोष्ठी, कोलकाता; पृष्ठ सं. – 59
15. गुलो – सुभाष चंद्र यादव (2015), किसुन संकल्प लोक, सुपौल; पृष्ठ सं. – 36
16. पंगु – जगदीश प्रसाद मंडल (2018), पल्लवी प्रकाशन, सुपौल; पृष्ठ सं. – 66